मंगलाचरण

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतम गणी
मंगलं कुंदकुंदार्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलं

अर्पण

कल्याणमूर्ति श्रीसदगुरुदेवको
जिन्होंने इस पामर पर अपार उपकार किया है। जो स्वयं
मोक्षमार्ग में विचर रहे हैं और अपनी दिव्य श्रुतधारा
द्वारा भरतभूमि के जीवों को सतत्‌रूप से मोक्षमार्ग
दर्शा रहे हैं जिनकी पवित्र वाणी में मोक्षमार्ग के
मूलरूप कल्याणमूर्ति सम्यग्दर्शन का माहात्म्य
निरन्तर बरस रहा है और जिनकी परम कृपा से
यह ग्रन्थ तैयार हुआ है – ऐसे कल्याणमूर्ति
सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझानेवाले
कल्याणमूर्ति श्री सदगुरुदेव को यह
ग्रन्थ अत्यन्त भक्तिभाव से
अर्पण करता हूँ.....

– दासानुदास रामजी

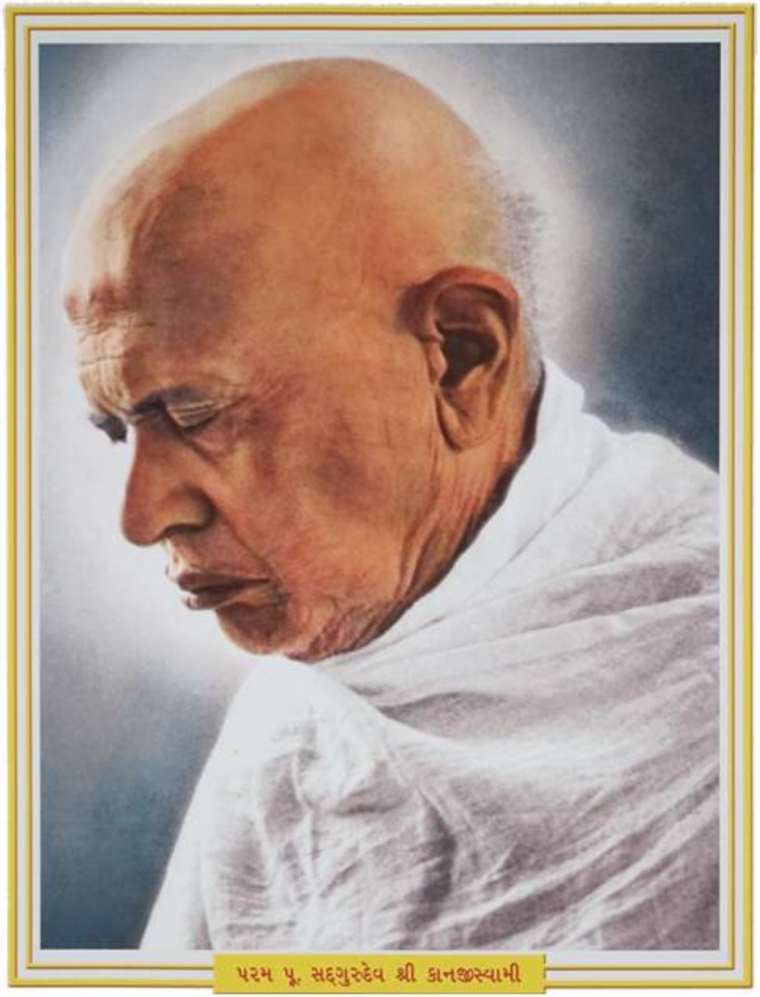

औपशामिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्यस्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥

अर्थ - [जीवस्य] जीव के [औपशामिकक्षायिकौ] औपशामिक और क्षायिक [भावौ] भाव [च मिश्रः] और मिश्र तथा [औदयिक-पारिणामिकौ च] औदयिक और पारिणामिक, यह पाँच भाव [स्वतत्त्वम्] निजभाव हैं, अर्थात् यह जीव के अतिरिक्त दूसरे में नहीं होते ।

द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा: यथाक्रमम् ॥ २ ॥

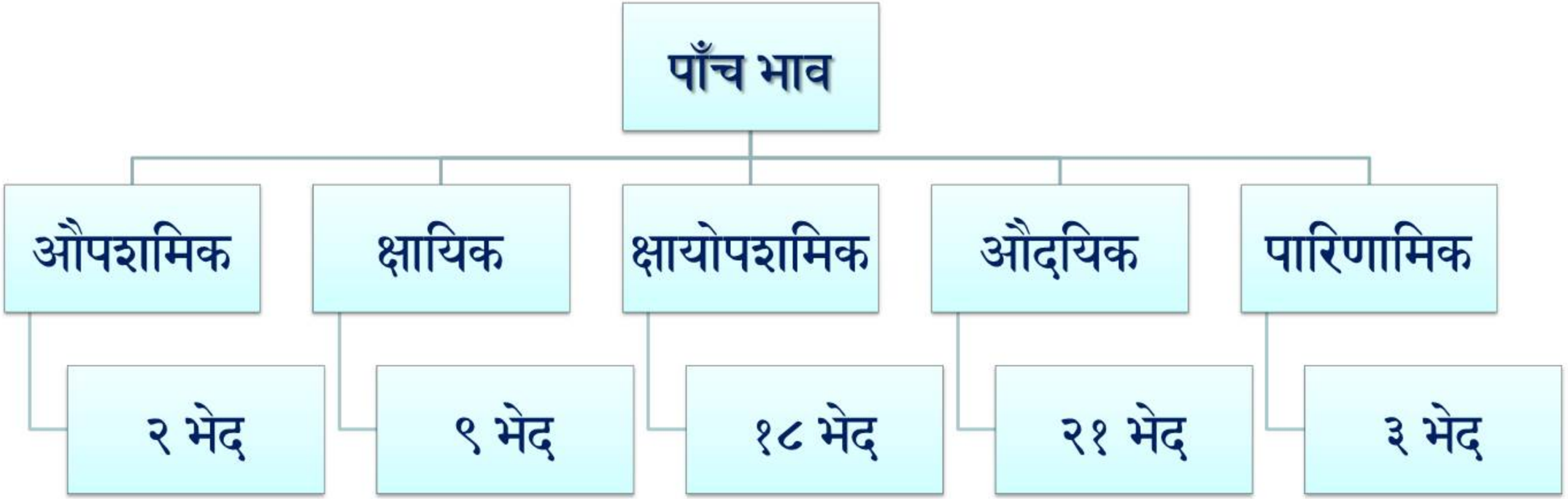

सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥

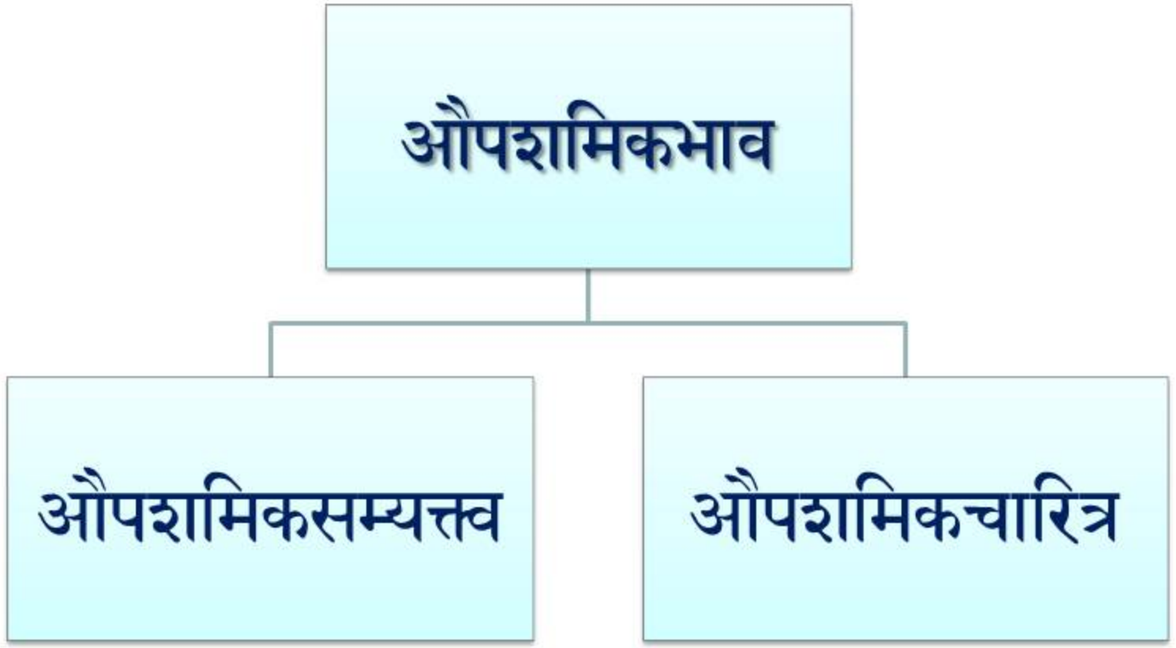

अध्याय २, सूत्र ४ - क्षायिकभाव के ९भेद

ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च॥ ४॥

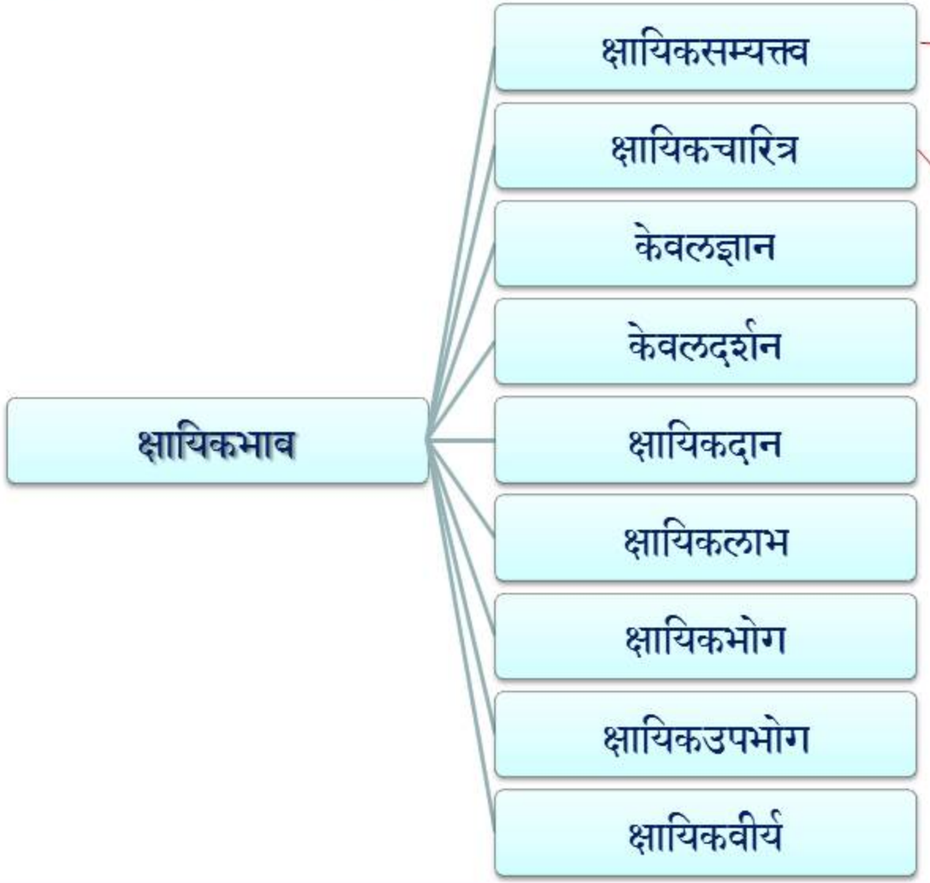

अपने मूलस्वरूप की दृढतम प्रतीतिरूप पर्याय, क्षायिक सम्यक्त्व है; जब वह प्रगट होती है, तब मिथ्यात्वकी तीन और अनन्तानुबन्धी की चार, इस प्रकार कुल सात कर्म-प्रकृतियोंका स्वयं क्षय होता है।

अपने स्वरूप का पूर्ण चारित्र प्रगट होना, वह क्षायिक चारित्र है। उस समय मोहनीय कर्म की शेष २१ प्रकृतियों का क्षय होता है। इस प्रकार जब कर्म का स्वयं क्षय होता है, तब मात्र उपचार से यह कहा जाता है कि "जीव ने कर्म का क्षय किया है"; परमार्थ से तो जीव ने अपनी अवस्था में पुरुषार्थ किया है, जड़ प्रकृति में नहीं ।

अध्याय २, सूत्र ५ - क्षायोपशमिक भाव के १८ भेद

ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रित्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥

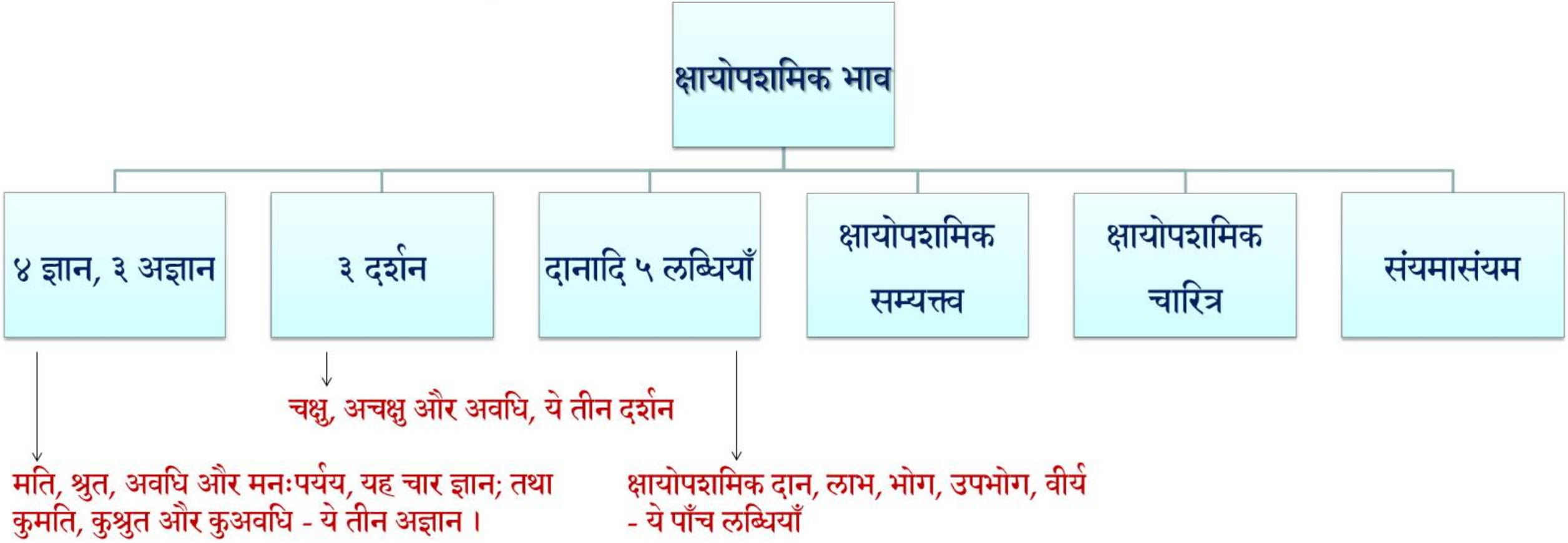

अध्याय २, सूत्र ६ - औदयिकभाव के २१ भेद

गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्या-चतुश्चतुस्त्र्येकैकैककषड् भेदा: ॥ ६ ॥

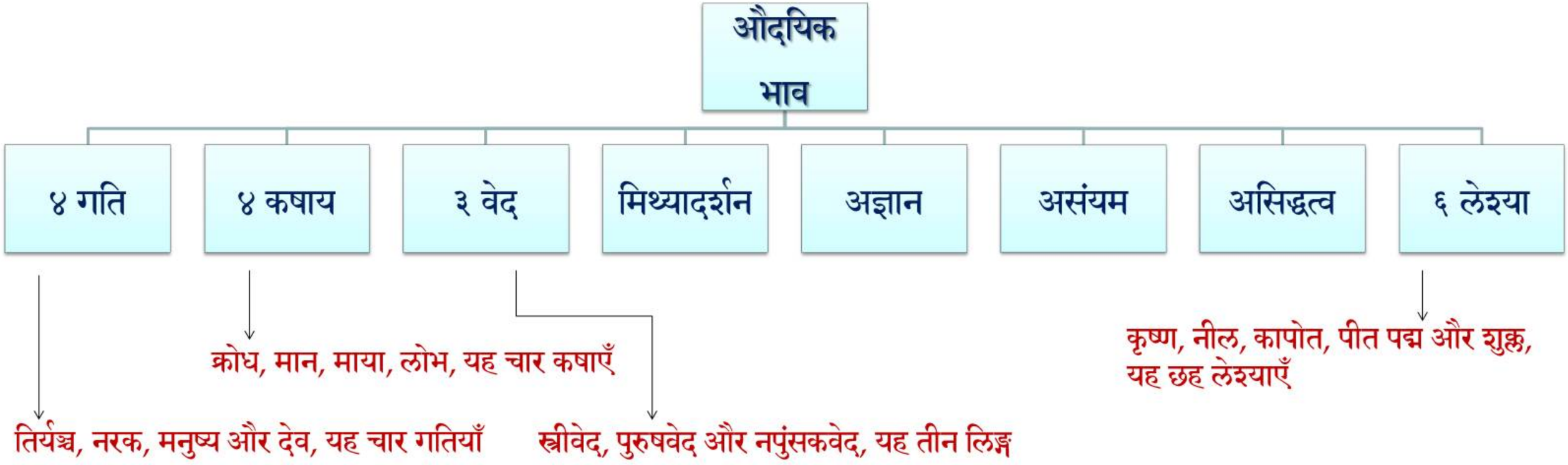

अध्याय २, सूत्र ७ - पारिणामिकभाव के ३ भेद

जीवभव्याभव्यत्वानि च॥ ॥७॥

कर्मोदय की अपेक्षा के बिना आत्मा में जो गुण मूलतः स्वभावमात्र ही हों, उन्हें 'पारिणामिक' कहते हैं।

सूत्र के अन्त में 'च' शब्द से अस्तित्व, वस्तुत्व, प्रमेयत्व आदि सामान्यगुणों का भी ग्रहण होता है।

उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥

अर्थ - [लक्षणम्] जीव का लक्षण [उपयोगः] उपयोग है।

चैतन्यगुण के साथ सम्बन्ध रखनेवाले जीव के परिणाम को उपयोग कहते हैं ।

तत्त्वार्थसूत्र

अध्याय २, सूत्र ८

उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥

अर्थ - [लक्षणम्] जीव का लक्षण [उपयोगः] उपयोग है।

चैतन्यगुण के साथ सम्बन्ध रखनेवाले जीव के परिणाम को उपयोग कहते हैं ।

अध्याय २, सूत्र ८ - जीव का लक्षण

उपयोगो लक्षणम्॥ ८॥

लक्षण –

बहुत से मिले हुए पदार्थों में से किसी एक पदार्थ को अलग करनेवाले हेतु (साधन) को लक्षण कहते हैं।

उपयोग को 'ज्ञान-दर्शन' भी कहते हैं, वह सभी जीवों में होता है और जीव के अतिरिक्त अन्य किसी द्रव्य में नहीं होता; इसलिए उसे जीव का असाधारण गुण अथवा लक्षण कहते हैं और वह सद्भूत (आत्मभूत) लक्षण है; इसलिए सब जीवों में सदा होता है ।

अध्याय २, सूत्र ८ - जीव का लक्षण

- सोने-चाँदी का एक पिण्ड होने पर भी, उसमें सोना अपने पीलेपन आदि लक्षण से और चाँदी अपने शुक्लादि लक्षण से दोनों अलग-अलग हैं, ऐसा उनका भेद जाना जा सकता है
- जीव और कर्म-नोकर्म (शरीर) एक क्षेत्र में होने पर भी जीव अपने उपयोग-लक्षकेण द्वारा कर्म-नोकर्मसे अलग है और द्रव्यकर्म-नोकर्म अपने स्पर्शादि लक्षण के द्वारा जीव से अलग हैं; इस प्रकार उनका भेद प्रत्यक्ष जाना जा सकता है।

प्रश्न - उपयोग का अर्थ क्या है ?

उत्तर - चैतन्य, आत्मा का स्वभाव है, उस चैतन्यस्वभाव का अनुसरण करनेवाले आत्मा के परिणाम को उपयोग कहते हैं। उपयोग जीव का अबाधित लक्षण है।

सिद्धान्त

मैं, शरीरादि के कार्य कर सकता हूँ और मैं उन्हें हिला-डुला सकता हँ - ऐसा जो जीव मानते हैं, वे चेतन और जड़द्रव्य को एकरूप मानते हैं। उनकी इस मिथ्यामान्यता को छुडाने के लिए और जीवद्रव्य, जड़ से सर्वथा भिन्न है, यह बताने के लिए इस सूत्र में जीव का असाधारण लक्षण 'उपयोग' है - ऐसा बताया गया है।

जिनवाणी स्तुति

तीर्थंकरो जगतना जयवंत वर्तो,
ॐकारनाद जिननो जयवंत वर्तो;
जिननां समोसरण सौ जयवंत वर्तो,
ने तीर्थ चार जगमां जयवंत वर्तो।

अहो! उपकार जिनवरनो, कुंदनो द्वनि दिव्यनो;
जिन-कुंद-द्वनि आप्या, अहो! ते गुरु कहाननो।
जिन-कुंद-द्वनि आप्या, अहो! ते भगवती मातनो।